श्रीगुरु जी और बन्दा बहादुर का मिलन

(इतिहास निर्माण करने वाली घटना)

गुरु गोविन्द सिंह एक ऐसे सामर्थ्यवान् व्यक्ति की खोज करने लगे जिसको वे भावी नेतृत्व सौंप सकें। अपने दीवानों और सभासदों से विचार-विमर्श करने के बाद उन्होंने नान्देड़ के एक आश्रम में वर्षों से रह रहे वैरागी माधोदास को नेतृत्व सौंपने का मन बना लिया।
भट्ट स्वरूप सिंह कोशिश बताते हैं :

"सम्वत् १७६५ विक्रमी आश्विन प्रविष्टे तृतीया (सितम्बर १७०८ ईसवी) के दिन सूर्यग्रहण पर लगे मेले पर गुरु जी साथी सिक्खों समेत माधोदास वैरागी के डेरे पर गए। मेला गोदावरी नदी के किनारे लगा हुआ था परन्तु माधोदास डेरे में उपस्थित नहीं था" (गुरू कीआं साखीआं, १८४७ विक्रमी, प्रो• प्यारा सिंह पदम द्वारा सम्पादित, सिंह ब्रदर्ज़, अमृतसर, पांचवां संस्करण, २००३ ईसवी, साखी ११०, पृष्ठ ११७)।

जब सांझ को वैरागी माधोदास गोदावरी नदी में स्नान करने बाद अपने डेरे पर लौटा तो उसके चेलों ने बताया कि प्रमुख अतिथि के सिक्खों ने डेरे के एक हिरन तथा एक बकरी और उसके दो लेलों को झटका कर अपने लिए भोजन तैयार कर लिया है।

यहां यह उल्लेखनीय है कि पूर्ववर्ती जीवन में जम्मू में रहने वाले लक्ष्मणदास को अपने हाथों शिकार में घायल हुई एक गर्भवती हिरनी की दयनीय अवस्था ने राजपूत से एक वैरागी बना दिया था। तब से वह वैराग्य को धारण करके अनेक स्थानों से होता हुआ अन्ततः नान्देड़ में आ बसा था।
अब अपने आश्रम के चार प्राणियों के झटकाए जाने की बात सुनकर वह रोष से भर उठा और उसी भाव से श्रीगुरु जी के पास आया तो वैरागी का मनो-भाव जानकर वे अर्थपूर्ण मुस्कान के साथ बोले : "माधोदास ! हम तुम्हें मिलने आए हैं, तुम कहां गए हुए थे।"
वैरागी ने रोष भरे शब्दों में उत्तर दिया : ग़रीब नवाज़ ! मैं आपको नहीं जानता, आप कहां से आए हैं। यदि आप मुझे जानते थे तो मेरी प्रतीक्षा कर लेनी थी। ये प्राणी क्योंकर मारने थे, यह डेरा वैष्णव साधुओं का है !!

श्रीगुरु जी ने प्रत्युत्तर में कहा : माधोदास ! हमारे से तुम्हारी पहचान एक बार ऋषिकेश-हरिद्वार में हुई थी, उस समय तुम एक साधु-मण्डली में थे जिसका मुखिया औघड़नाथ योगी नासिक वाला था। इस पर वैरागी बोला : महाराज ! आप गुरु गोविन्द राय जी हो जिनके पिता ने दिल्ली में जाकर अपना शीश बलिदान किया था !!

वैरागी का रोष कम होने लगा था। तब श्रीगुरु जी ने हां में उत्तर देते हुए आगे कहा – : माधोदास ! तुमने पूछा है कि यह डेरा वैष्णव साधुओं का है जहां ये प्राणी क्योंकर मारने थे, यह शंका मेरी निवृत्त करें। माधोदास ! मुझे पता था, इसीलिए ये प्राणी मारे हैं, वरना इन्हें मारने की क्या ज़रूरत थी !! मैं तुम्हें जगाने के लिए आया हूं, वरना यहां चल कर आने की क्या ज़रूरत थी !!

अन्त में गुरु गोविन्द सिंह ने अपने आने का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा : देखो माधोदास ! इन तीन-चार जानवरों के मारने से तो तेरा आश्रम भ्रष्ट हो गया, तम्हें इस विशाल आश्रम हिन्दुस्तान का पता कैसे नहीं जहां मुस्लिम-सत्ता द्वारा सैंकड़ों-हज़ारों मज़लूम निर्दोष हिन्दू नित्य मारे जा रहे हैं। मैं केवल तेरा ध्यान दिलाने के लिए यहां तुम्हारे आश्रम में आया हूं।

वैरागी की अपने आश्रम के प्राणियों के प्रति व्यक्त की गई व्यक्तिगत-पीड़ा श्रीगुरु जी के इस एक वाक्य के प्रभाव से पलक झपकते ही राष्ट्रगत-पीड़ा में परिणत हो गई। वैरागी द्रवित होकर बोला : मैं आज से दिल-ओ-जान से आपका बन्दा हूं, मुझे आगे के लिए कारसेवा बताएं (गुरू कीआं साखीआं, साखी ११०, पृष्ठ ११७-११८)।

इस प्रकार वैरागी पहले वाला माधोदास नहीं रहा। वह अपना मान-ताण त्यागकर श्रीगुरु जी का सही बन्दा बन गया। तब से वह "बन्दा वैरागी" कहलाने लगा।

भाई केसर सिंह छिब्बर अपनी रचना बंसावलीनामा दसां पातशाहीआं का (१८२६ विक्रमी, प्रो• प्यारा सिंह पदम द्वारा सम्पादित, सिंह ब्रदर्ज़, अमृतसर, १९९७ ईसवी) १०/६२३-६२५ में बताते हैं :
"उसके बाद श्रीगुरु जी ने अपने पास से सब आदमी दूर कर दिए। दोनों ने परस्पर मिल-बैठ कर गुप्त वार्ता-लाप किया। अन्ततः वैरागी गुरु जी के चरण आ लगा। पाहुल=दीक्षा लेकर गुरु का दृढ़-निश्चयी सिंह बन गया। उसने गुरु साहिब से कहा, : मैं आपका बन्दा हूं। आप हैं पूर्ण सत्गुरु और मेरे रक्षक।

इस प्रकार श्रीगुरु जी भावी नेतृत्व का भार उसे सौंप कर वहां से चले आए। वह आश्रम के बाहरी द्वार तक श्रीगुरु जी को विदा करने आया और फिर मुड़ गया। मुड़ते हुए उसने श्रीगुरु जी से पूछा : कितनी मुद्दत तक बात पर्दे में रखनी है !

तब गुरु जी ने कहा : नौ मास दस दिन तक। इसके बाद जितना ठीक समझो।"

इसके कुछ दिनों बाद वैरागी माधोदास = बन्दा वैरागी ने श्रीगरु जी की आज्ञा के अनुरूप अपना आश्रम हरि दास दक्खनी को सौंप कर स्वयं उनके निवास स्थान पर आ पहुंचा। दूसरे दिन भाई दया सिंह ने माधोदास से कहा : सन्त जी ! तैयारी करें, आपको खाण्डे की पाहुल देनी है। इसके बाद श्रीगुरु जी ने उसे अपने पावन हाथों से विधिपूर्वक खाण्डे की पाहुल देकर वैरागी से सिंह सजा दिया (गुरू कीआं साखीआं, साखी १११, पृष्ठ १९९)।

भट्ट स्वरूप सिंह कोशिश आगे बताते हैं – सम्वत् १७६५ विक्रमी की कार्त्तिक शुक्ला तृतीया के दिन वैरागी माधोदास=बन्दा सिंह को पन्थ का जत्थेदार बनाकर श्रीगुरु जी ने उसे नायक भगवन्त सिंह बंगेश्वरी के टांडे में मद्रदेश (पंजाब का प्राचीन नाम) जाने का आदेश दिया। उसके हमराह भाई भगवन्त सिंह, कोइर सिंह, बाज़ सिंह, विनोद सिंह और काहन सिंह – ये पांच प्रमुख सिक्ख भेजे गए। श्रीगुरु जी ने बन्दा सिंह को एक कृपाण, एक मुहर, पांच तीर और एक निशान साहिब देकर पंजाब की ओर विदा किया (गुरू कीआं साखीआं, १८४७ विक्रमी, साखी १११, पृष्ठ २००)।
श्रीगुरु गोविन्द सिंह से प्रेरणा पाकर शूरवीर बन्दा वैरागी ने लगभग नौ मास के भीतर गुप्त रूप से एक बलिष्ठ सैनिक संगठन खड़ा कर लिया और उसके बाद मुग़लों को पराजित करना प्रारम्भ कर दिया। फिर

उस शूरवीर ने श्रीगुरु जी के पिता, माता और पुत्रों के दोषी मुस्लिमों को समुचित दण्ड देते हुए सरहिन्द की ईंट से ईंट बजा दी।